आचार्य श्री की समाज को देन

□ नीलम कुमारी नाहटा

चारित्र-चूड़ामणि, इतिहास मार्तण्ड, कलिकाल सर्वज्ञ समान, पोरवाल-पल्लीवाल आदि अनेक जाति-उद्धारक, दक्षिण-पश्चिम देश पावनकर्ता, प्रतिपल वन्दनीय महामहिम परम श्रद्धेय श्रीमज्जैनाचार्य भगवन्त श्री हस्तीमल जी म. सा. की समाज को देन इतनी अद्वितीय, अनुपम, सर्वव्यापी और सर्वतोमुखी थी कि सीमित समय और सीमित लेख में उसे सीमाबद्ध कर सकना सम्भव नहीं है फिर भी उस ओर संकेत करने का प्रयास किया जा रहा है।

आचार्य, विद्वान्, क्रियावान, त्यागी, तपस्वी, उपकारी और चमत्कारी संत तो जैन समाज में कितने ही हुए हैं, और होते रहेंगे परन्तु इन सभी एवम् अन्य अनेक गुणों का एक ही व्यक्ति में मिलना जैन समाज के इतिहास में आचार्य श्री हस्तीमलजी म. सा. के अतिरिक्त अन्य कहीं नहीं है। अक्सर देखा गया है कि जहाँ ज्ञान है वहाँ क्रिया नहीं है, जहाँ क्रिया है वहाँ पाँडित्य नहीं है, जहाँ चमत्कार है तो ऋजुता नहीं है, जहाँ ऋजुता है तो कुछ भी नहीं है, जहाँ उपकार है तो लोकेषणा-विमुक्ति नहीं है, जहाँ लोकेषणा-विमुक्ति है तो कर्तृत्व विशाल नहीं है। परन्तु जब इतिहास का विद्यार्थी तुलनात्मक अध्ययन करता है, शोधार्थी अनुसंधान करता है तो वह चमत्कृत, आश्चर्यचकित और दंग रह जाता है इन सभी गुणों को एक ही व्यक्तित्व में पाकर।

क्रिया—स्व० आचार्य श्री स्वयम् कठोर क्रिया के पालने वाले थे और शिष्यों, शिष्याओं से भी आगमोक्त आचरण का परिपालन करवाने में हमेशा जागरूक रहतें थे, इसलिए उन्हें चारित्र-चूड़ामणि कहा जाता था। जमाने के बहाने से शिथिलाचार लाने के विरोधी होने के साथ-साथ वे आगम और विवेक के साथ अन्ध रूढ़िवाद में संशोधन के पक्षधर भी थे। जागरण से शयन तक आपकी दिनचर्या सदा अप्रमत्त रहती थी। हमेशा आप अध्यात्म चिंतन में लीन रहते थे। मौन एवं ध्यान की साधना में सदैव संलग्न रहते थे। क्रिया के क्षेत्र में यह उनकी सबसे बड़ी देन थी।

ज्ञान—आचार्य श्री ने स्वयं हिन्दी, संस्कृत, प्राकृत आदि भाषाओं का, आगमों एवं जैन-जैनेतर दर्शनों का तलस्पर्शी अध्ययन किया। जिस समय स्थानकवासी समाज में ऐसी धारणाएँ प्रचलित थीं कि जैन मुनि को आगम एवं आत्मज्ञान के

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

अलावा और किसी का अध्ययन नहीं करना चाहिये। विपक्षी समाज पर आक्षेप लगाते थे कि स्थानकवासी समाज में व्याकरण को व्याधिकरण समझा जाता है। ऐसे समय में आचार्य श्री ने संस्कृत भाषा पर भी अधिकारपूर्ण पांडित्य प्राप्त किया एवं अपने शिष्यों व अनेक श्रावकों को ज्ञानार्जन एवं पांडित्य-प्राप्ति के लिए प्रोत्साहित किया। ज्ञान के क्षेत्र में आपकी यह प्रमुख देन थी।

शास्त्रार्थ—वि० सं० १९८९-९० में अजमेर साधु-ससम्मेलन से पूर्व किशनगढ़ में रत्नवंशीय साधु सम्मेलन का आयोजन था। उसमें अजमेर सम्मेलन में अपनायी जाने वाली रीति-नीति सम्बन्धी विचार-विमर्श करना था। उस समय में आचार्य श्री केवल एक दित के लिए केकड़ी पधारे। वह युग शास्त्रार्थ का युग था और केकड़ी तो शास्त्रार्थों की प्रसिद्ध भूमि रही है। दिगम्बर जैन शास्त्रार्थ संघ, अम्बाला की स्थापना के तुरन्त बाद ही उनको सर्वप्रथम शास्त्रार्थ केकड़ी में ही करना पड़ा था। यह शास्त्रार्थ मौखिक रूप से आमने-सामने स्टेज लगाकर ६ दिन तक चला था।

स्थानकवासी समाज के कोई भी विद्वान् संत-सती केकड़ी पधारते थे तो आते ही उन्हें शास्त्रार्थ का चैलेंज मिलता था। तदनुरूप आचार्य श्री को पधारते ही चैलेंज मिला तो आचार्य श्री ने फरमाया कि यद्यपि मुझे बहुत जल्दी है किन्तु यदि मैंने विहार कर दिया तो यही समझेंगे कि डरकर भाग गये अतः उन्होंने ८ दिन विराजकर शास्त्रार्थ किया। श्वे. मू. पू. समाज की ओर से शास्त्रार्थकर्ता श्री मूलचन्द जी श्रीमाल थे। ये पं० श्री घेवरचन्द जी बांठिया (वर्तमान में ज्ञानगच्छीय मुनि श्री) के श्वसुर थे। ये श्री कानमल जी कर्णावट के नाम से शास्त्रार्थ करते थे। संयोग देखिए कि शास्त्रार्थ के निर्णायक भी इन्हीं पं० सा० मूलचन्द जी श्रीमाल को बनाया गया। और इनको अपने निर्णय में कहना पड़ा कि आचार्य श्री का पक्ष जैन दर्शन की दृष्टि से सही है किन्तु अन्य दर्शनों की दृष्टि से कुछ बाधा आती हैं। आचार्य श्री ने फरमाया कि मैं एक जैन आचार्य हूँ और जैन दर्शन के अनुसार मेरा पक्ष और समाधान सही है। मुझे इसके अतिरिक्त कुछ नहीं चाहिये। इस प्रकार केकड़ी में शास्त्रार्थ में विजयश्री प्राप्त करने के बाद ही आचार्य श्री ने विहार किया। शास्त्रार्थ में आचार्य श्री ने संस्कृत में शास्त्रार्थ करने की चुनौती दी थी। इसके बाद सन् १९३६ के अजमेर चातुर्मास में आचार्य प्रवर ने श्वे० मू० पू० समाज के सुप्रसिद्ध विद्वान् संत श्री दर्शनविजयजी को सिंहनाद करते हुए संस्कृत में शास्त्रार्थ करने के लिए ललकारा। शुद्ध सनातन जैन समाज अर्थात् स्था० जैन समाज की ओर से संस्कृत में शास्त्रार्थ की चुनौती दिये जाना अभूतपूर्व ऐतिहासिक घटना थी। जो इसके पहले और इसके बाद आज तक कभी नहीं हुई। आचार्य भगवन्त ने यह

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

बहुत बड़ा कीर्तिमान स्थापित किया। शास्त्रार्थ के क्षेत्र में यह आपकी सबसे बड़ी देन थी।

प्रतिभा-खोज—स्था० समाज में विद्वानों और पंडितों की विपुलता अधिक नहीं रही है। आपने इस आवश्यकता को पहचाना। अज्ञानियों के समक्ष तो हीरे भी काचवत् होते हैं। रत्नों की परीक्षा जौहरी ही कर सकते हैं और आप तो जौहरियों के भी गुरु थे। पहले समाज के कुछ व्यक्ति विद्वानों से यही आशा करते थे कि वे ज्ञान-दान हमेशा मुफ्त में ही देते रहें। जबकि वे यह भूल जाते थे कि विद्वान् भी गृहस्थ ही होते हैं। उनकी भी पारिबारिक आवश्यकताएँ होती हैं। आपने अपनी पैनी दृष्टि से इसका अनुभव किया और विद्वानों के लिए तदनुरूप व्यवस्था की। उनको समाज में पूरे आदर-सम्मान के साथ प्रतिष्ठित किया। जिनकी प्रतिभा पर आवरण आया हुआ था, ऐसे अनेक व्यक्तियों को आपने पहचाना, उन्हें प्रेरित किया, प्रोत्साहित किया और आगे बढ़ाया। आज वे अपना और समाज का नाम रोशन कर रहे हैं। संस्कारवान विद्वान् तैयार करने में आपके सदुपदेशों से स्थापित संस्था जैन सिद्धान्त शिक्षण संस्थान, जयपुर पं० श्री कन्हैयालाल जी लोढ़ा के संयोजन में बहुत उल्लेखनीय कार्य कर रही है। स्था० समाज में पहली बार ही विद्वत् परिषद् की स्थापना आपके सदुपदेशों से ही हुई। इस प्रकार विद्वत्ता की परम्परा और विद्वानों की परम्परा आचार्य श्री की अतीव महत्वपूर्ण देन है।

प्राचीन ग्रंथों एवं शास्त्रों की सुरक्षा—समाज में हस्तलिखित शास्त्रों और ग्रन्थों की बहुत प्राचीन और समृद्ध परम्परा रही है, परन्तु पहले मुनिगण अपने-अपने विश्वसनीय गृहस्थों के यहाँ बस्ते बाँध-बाँधकर रखवा देते थे और आवश्यकता होने पर वहाँ से मंगवाकर वापस भिजवा देते थे। इस व्यवस्था में कभी-कभी मुनिराज का अचानक स्वर्गवास हो जाने से बस्ते गृहस्थों के घर ही रह जाते और विस्मृत होकर लुंज-पुंज हो जाते थे। अलग-अलग स्थान पर रखे रहने से न तो उनकी सूची बन पाती, न ही विद्वान् उनका उपयोग कर पाते एवं महत्त्वपूर्ण साहित्य अन्धेरी कन्दराओं में सड़ता रहता था। आपने इस घोर अव्यवस्था की परम्परा का अन्त कर जयपुर लाल भवन में सभी उपलब्ध हस्त-लिखित ग्रन्थों और आगमों को एकत्रित कर सूचियाँ बनवायीं जिससे वे पूर्णतया सुरक्षित हो गये और विद्वद्जन उनसे लाभ उठा सकते हैं।

संस्थाओं के क्षेत्र में—समाज-सेवा के विभिन्न आयामों की पूर्ति हेतु आपके सदुपदेशों से प्रेरित होकर विभिन्न स्थानों पर बीसियों संस्थाएँ स्थापित हुईं। बहुत से स्थानों पर देखा जाता है कि मुनिराजों के विहार के साथ-साथ संस्थाओं के कार्यालयों का भी विहार होता रहता है। परन्तु आपने इस दिशा में एक नई

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

विधा, नई टेकनीक का प्रयोग किया। संस्थाओं के उपरांत आप उनमें सर्वथा असंग-निसंग रहते, संस्थाएँ अपने ही बलबूते पर स्वतंत्र रूप से कार्य करती हैं। इससे संस्थाएँ अधिक अच्छा और सुन्दर कार्य निष्पादित करती हैं तथा प्रेरक का अधिक समय संस्थाओं के रगड़े-झगड़े और व्यवस्थाओं में व्यय नहीं होता। यह आचार्य श्री की अनुकरणीय देन है।

इतिहास के क्षेत्र में स्था० समाज पूर्णतया आध्यात्मिक समाज रहा है। कठोर क्रिया पालन, उग्र तपस्या, आत्मचिंतन, आत्मध्यान, आत्मोत्थान ही इसका प्रमुख लक्ष्य रहा है। अहिंसा पालन में सतत जागरूकता इसका ध्येय है। अतः इतिहास लेखन की ओर इस समाज का ध्यान कुछ कम रहा। इसलिए इस समाज में यह खटकने वाली कमी रही है। भगवान महावीर से लेकर इसकी परम्परा तो अविच्छिन्न चली आ रही है पर उसका क्रमबद्ध लेखन और विगत-वार माहिती नहीं थी। प्रभु वीर पट्टावली जैसे प्रयत्न हुए थे परन्तु फिर भी काफी कमी रही। आचार्य श्री ने इस कमी को महसूस किया। लगभग एक युग के भागीरथ प्रयास और ध्येयलक्षी सतत, पुरुषार्थ से आपने 'जैन धर्म का मौलिक इतिहास' निष्पक्ष दृष्टि से लिखकर जैन समाज के इतिहास में अद्भुत, अनुपम, अद्वितीय, ऐतिहासिक कार्य सम्पन्न किया। 'जैन आचार्य चरितावली', 'पट्टावली प्रबन्ध संग्रह' आदि ग्रन्थ भी आपने नवीन ऐतिहासिक खोज के आधार पर लिखे। इतिहास के क्षेत्र में यह आपकी अद्भुत अपूर्व देन है।

आगम-प्रेम—आगम ज्ञान के प्रचार-प्रसार में आपको विशेष आनन्द आता था। 'नन्दी सूत्र' आपका सर्वाधिक प्रिय सूत्र था। उत्तराध्ययन, नन्दी, प्रश्न व्याकरण, अन्तगड़, दशवैकालिक आदि सूत्रों का सरल हिन्दी भाषा में व्याख्या विश्लेषणयुक्त अनुवाद प्रकाशित कराये जो बहुत ही लोकप्रिय हुए। इनसे प्रेरणा पाकर अन्यत्र भी काफी प्रयत्न प्रारम्भ हुए।

सामायिक-स्वाध्याय—सामायिक-स्वाध्याय के प्रचार-प्रसार में तो आपने रात-दिन एक कर दिया। आपके प्रयास के फलस्वरूप हजारों नये स्वाध्यायी बने हैं और आप ही की प्रेरणा से लाखों सामायिकें प्रतिवर्ष नई होने लग गई हैं। कोई भी आपके दर्शन करने आता था तो आप प्रथम प्रश्न यही पूछते थे कि स्वाध्याय हो रहा है या नहीं? कहाँ रहते हैं, क्या करते हैं आदि सांसारिक बातों की तरफ आपका ध्यान था ही नहीं। सामायिक-स्वाध्याय के प्रचार-प्रसार में तो आपने अपना जीवन ही दे दिया। समाज को आपकी यह देन अति उल्लेखनीय है।

करुणासागर दीनदयाल—आचार्य भगवन्त ने इस प्रकार ज्ञान और क्रिया के क्षेत्र में नई-नई बुलन्दियों को तो छुआ ही, इसके साथ-साथ उनके हृदय में

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

करुणा एवं दया का सतत प्रवाही निर्झर सदा प्रवहमान रहता था। उनके सदुपदेशों से स्थापित बाल शोभा अनाथालय, महावीर विकलांग समिति, वर्द्धमान जैन मेडिकल रिलीफ सोसायटी, भूधर कुशल धर्म बन्धु कल्याण कोष, अमर जैन मेडिकल रिलीफ सोसाइटी, जीवदया, अमर बकरा, महावीर जैन रत्न कल्याण कोष, महावीर जैन हॉस्पिटल आदि अनेक संस्थाएँ इस दिशा में उल्लेखनीय कार्य निष्पादित कर रही है। हजारों जरूरतमन्द इससे लाभान्वित हो रहे हैं।

इस प्रकार स्व० पू० गुरुदेव की देन हर क्षेत्र में अद्भुत, अपूर्व रही है। हर क्षेत्र में नये-नये कीर्तिमान स्थापित हुए हैं। हृदय की असीम आस्था एवम् अनन्त श्रद्धा के साथ अत्यन्त भक्ति बहुमानपूर्वक स्व० पूज्य गुरुदेव को अनंत-अनंत वन्दन।

—केकड़ी (राजस्थान)

अमृत कण

- सावधानी से की गई क्रिया ही फलवती होती है।
- जिनका चित्त स्वच्छ नहीं है, वे परमात्म-सूर्य के तेज को ग्रहण नहीं कर सकते।
- ज्ञान एक रसायन है जिससे आत्मा की शक्ति बढ़ती है।
- दया करना एक प्रकार से साधु-वृत्ति का अभ्यास है।
- आन्तरिक विजय प्राप्त करने के लिए शास्त्र-शिक्षा की आवश्यकता है।
- समाज को व्यवस्थित रूप से चलाने के लिए संघधर्म आवश्यक है।
- स्वाध्याय से चतुर्विध संघ में ज्योति आ सकती है।

—आचार्य श्री हस्ती

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org